ERSCKD

पाठ – 3.3

घीसा

महादेवी वर्मा

जीवन परिचय

लेखिका और कवयित्री महादेवी वर्मा का जन्म सन् 1907 में उत्तर प्रदेश के फर्रूखाबाद में हुआ था। इन्होंने सन् 1932 में प्रयाग विश्वविद्यालय से संस्कृत में स्नातकोत्तर की डिग्री प्राप्त की। गद्य और पद्य दोनों पर ही इन्हें समानाधिकार प्राप्त था। गद्य साहित्य में संस्मरणों और रेखाचित्र लेखन को प्रारंभ करने का श्रेय इन्हें ही जाता है। इनके संस्मरणों में कोमल मानवीय भावनाओं और संवेदनाओं की अभिव्यक्ति बहुत ही हृदयस्पर्शी एवं मार्मिकता के साथ हुई है। उनके पात्र प्रायः अनाथ, स्नेह से वंचित, गरीब समाज द्वारा प्रताड़ित किंतु ईमानदार व्यक्ति अथवा पशु–पक्षी होते हैं। इन्होंने नारी की समस्याओं को भी बहुत प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया है। इनकी भाषा विशुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है, किन्तु आवश्यकतानुरूप देशज शब्दों का प्रयोग भी इनकी रचनाओं में देखा जा सकता है। 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत', 'यामा' तथा 'दीपशिखा' इनके काव्य संग्रह हैं। 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'श्रृंखला की कड़ियाँ', 'मेरा परिवार', 'पथ के साथी', 'क्षणदा' आदि इनकी गद्य रचनाएँ हैं। इनका गद्य साहित्य, समाज का जीता–जागता एलबम है।

इनकी रचना 'यामा' को मंगला प्रसाद पारितोषक तथा काव्य संकलन 'नीरजा' को सेक्सरिया पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इन्हें 'पद्म भूषण' अलंकार, 'भारतीय ज्ञानपीठ', 'साहित्य अकादमी' एवं 'भारत–भारती' पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। इन्हें आधुनिक युग की मीरा की उपाधि प्रदान की गई है।

वर्तमान की कौन सी अज्ञात प्रेरणा हमारे अतीत की किसी भूली हुई कथा को सम्पूर्ण मार्मिकता के साथ दोहरा जाती है यह जान लेना सहज होता, तो मैं भी आज गाँव के उस मलिन, सहमे, नन्हें से विद्यार्थी की सहसा याद आ जाने का कारण बता सकती, जो एक छोटी लहर के समान ही मेरे जीवन तट को अपनी सारी आर्द्रता से छूकर अनंत जलराशि में विलीन हो गया है।

गंगा पार झूँसी के खंडहर और उसके आस–पास के गाँवों के प्रति मेरा जैसा अकारण आकर्षण रहा है, उसे देख कर ही संभवतः लोग जन्म–जन्मान्तर के संबंध का व्यंग्य करने लगे हैं। है भी तो आश्चर्य की बात !

जिस अवकाश के समय को लोग ईष्ट मित्रों से मिलने, उत्सवों में सम्मिलित होने तथा अन्य आमोद–प्रमोद के लिए सुरक्षित रखते हैं, उसी को मैं इस खंडहर और उसके क्षत–विक्षत चरणों पर पछाड़ें खाती हुई भागीरथी के तट पर काट ही नहीं, सुख से काट देती हूँ।

दूर–पास बसे हुए, गुड़ियों के बड़े–बड़े घरौंदों के समान लगने वाले कुछ लिपे–पुते, कुछ जीर्ण–शीर्ण घरों से स्त्रियों का झुण्ड पीतल–ताँबे के चमचमाते मिट्टी के नए लाल और पुराने भदरंग घड़े लेकर गंगाजल भरने आता है, उसे भी मैं पहचान गई हूँ। उनमें कोई बूटेदार लाल, कोई सफेद और कोई मैल और सूत में अद्वैत स्थापित करने वाली, कोई कुछ नई और कोई छेदों से चलनी बनी हुई धोती पहने रहती हैं। किसी की मोम लगी पाटियों के बीच में एक अंगुल चौड़ी सिंदूर रेखा अस्त होते हुए सूर्य की किरणों में चमकती रहती है और किसी के कड़वे तेल से भी अपरिचित रूखी जटा बनी हुई छोटी–छोटी लटें मुख को घेर कर उसकी उदासी को और अधिक केंद्रित कर देती है। किसी की साँवली गोल कलाई पर शहर की कच्ची नगदार चूड़ियों के नग रह–रहकर हीरे से चमक जाते हैं और किसी के दुर्बल काले पहुँचे पर लाख की पीली मैली चूड़ियाँ काले पत्थर पर मटमैले चंदन की मोटी लकीरें जान पड़ती हैं। कोई अपने गिलट के कड़े युक्त हाथ घड़े की ओट में छिपाने का प्रयत्न सा करती रहती है और कोई चाँदी के पछेली–ककना की झनकार के साथ ही बात करती है। किसी के कान में लाख की पैसे वाली तरकी धोती से कभी–कभी झाँक भर लेती है और किसी की ढारें लंबी जंजीर से गला और गाल एक करती रहती है। किसी के गुदना गुदे गेंहुए पैरों में चाँदी के कड़े सुडौलता की परिधि से लगते हैं और किसी की फैली उँगलियों और सफेद एड़ियों के साथ मिली हुई स्याही राँगे और काँसे के कड़ों को लोहे की साफ की हुई बेड़ियाँ बना देती हैं।

वे सब पहले हाथ–मुँह धोती हैं, फिर पानी में कुछ घुसकर घड़ा भर लेती हैं– तब घड़ा किनारे रख, सिर पर इंडुरी ठीक करती हुई मेरी ओर देखकर कभी मलिन, कभी उजली कभी दुःख की व्यथा–भरी, कभी सुख की कथा–भरी मुस्कान से मुस्करा देती हैं। अपने – मेरे बीच का अंतर उन्हें ज्ञात है, तभी कदाचित् वे इस मुस्कान के सेतु से उसका वार–पार जोड़ना नहीं भूलतीं।

ग्वालों के बालक अपनी चरती हुई गाय–भैंसों में से किसी को उस ओर बहकते देखकर ही लकुटी लेकर दौड़ पड़ते, गड़रियों के बच्चे अपने झुंड की एक भी बकरी या भेड़ को उस ओर बढ़ते देखकर कान पकड़कर खींच ले जाते हैं और व्यर्थ दिन भर गिल्ली–डंडा खेलनेवाले निठल्ले लड़के भी बीच–बीच में नजर बचाकर मेरा रुख देखना नहीं भूलते।

उस पार शहर में दूध बेचने जाते या लौटते हुए ग्वाले, किले में काम करने जाते या घर आते हुए मजदूर, नाँव बाँधते या खोलते हुए मल्लाह, कभी–कभी 'चुनरी त रंगाउस लाल मजीठी हो' गाते–गाते मुझ पर दृष्टि पड़ते ही अचकचा कर चुप हो जाते हैं। कुछ विशेष सभ्य होने का गर्व करने वालों को मुझे एक सलज्ज नमस्कार भी प्राप्त हो जाता है।

कह नहीं सकती, अब और कैसे मुझे उन बालकों को कुछ सिखाने का ध्यान आए पर जब बिना कार्यकारिणी के निर्वाचन के, बिना पदाधिकारियों के चुनाव के, बिना भवन के, बिना चंदे की अपील के और सारांश यह कि बिना किसी चिर–परिचित समारोह के, मेरे विद्यार्थी पीपल के पेड़ की घनी छाया में मेरे चारों ओर एक हो गए, तब मैं बड़ी कठिनाई से गुरु के उपयुक्त गंभीरता का भार वहन कर सकी।

और वे जिज्ञासु कैसे थे सो कैसे बताऊँ ! कुछ कानों में बालियाँ और हाथों में कड़े पहने, धुले कुरते और ऊँची धोती में नगर और ग्राम का सम्मिश्रण जान पड़ते थे, कुछ अपने बड़े भाई का पाँव तक लम्बा कुरता पहने खेत में डराने के लिए खड़े किए हुए नकली आदमी का स्मरण दिलाते थे, कुछ उभरी पसलियों, बड़े पेट और टेढ़ी दुर्बल टाँगों के कारण अनुमान से ही मनुष्य संतान की परिभाषा में आ सकते थे और कुछ अपने दुर्बल, रूखे और मलिन मुखों की करुण सौम्यता और निष्प्रभ पीली आँखों में संसार भर की उपेक्षा बटोर बैठे थे; पर घीसा उनमें अकेला ही रहा और आज भी मेरी स्मृति में अकेला ही आता है।

वह गोधूली मुझे अब तक नहीं भूली। संध्या के लाल सुनहली आभा वाले उड़ते हुए दुकूल पर रात्रि ने मानों छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी। मेरा नाव वाला कुछ चिंतित सा लहरों की ओर देख रहा था ; बूढ़ी भक्तिन मेरी किताबें, कागज–कलम, आदि संभाल कर नाव पर रख कर बढ़ते अंधकार पर खिजलाकर बुदबुदा रही थी, या मुझे कुछ सनकी बनाने वाले विधाता पर, यह समझना कठिन था। बेचारी मेरे साथ रहते–रहते दस लंबे वर्ष काट आई है, नौकरानी से अपने आपको एक प्रकार की अभिभाविका मानने लगी है;

परंतु मेरी सनक का दुष्परिणाम सहने के अतिरिक्त उसे क्या मिला है ? सहसा ममता से मेरा मन भर आया परन्तु नाव की ओर बढ़ते हुए मेरे पैर, फैलते हुए अंधकार में से एक स्त्री–मूर्ति को अपनी ओर आता देख ठिठक गए। साँवले कुछ लंबे से मुखड़े में पतले स्याह ओठ कुछ अधिक स्पष्ट हो रहे थे। आँखें छोटी पर व्यथा से आर्द्र थीं। मलिन, बिना किनारी की गाढ़े की धोती ने उसके सलूका रहित अंगों को भलीभाँति ढँक लिया था; परंतु तब भी शरीर की सुडौलता का आभास मिल रहा था। कंधे पर हाथ रखकर वह जिस दुर्बल अर्धनग्न बालक को अपने पैरों से चिपकाए हुए थी, उसे मैंने संध्या के झुटपुटे में ठीक से नहीं देखा।

स्त्री ने रुक–रुककर कुछ शब्दों और कुछ संकेत में जो कहा, उससे मैं केवल यह समझ सकी कि उसके पति नहीं है, दूसरों के घर लीपने–पोतने का काम करने वह चली जाती है और उसका अकेला लड़का ऐसे ही घूमता रहता है। मैं इसे भी और बच्चों के साथ बैठने दिया करूँ, तो यह कुछ तो सीख सके।

दूसरे इतवार को मैंने उसे सबसे पीछे अकेले एक ओर दुबक कर बैठे हुए देखा। पक्का रंग, पर गठन में विशेष सुडौल, मलिन मुख जिसमें दो पीली, पर श्वेत आँखें जड़ी सी जान पड़ती थीं। कस कर बंद किए हुए पतले होठों की दृढ़ता और सिर पर खड़े हुए छोटे–छोटे रूखे बालों की उग्रता उसके मुख की संकोच भरी कोमलता से विद्रोह कर रही थी। उभरी हड्डियों वाली गर्दन को सँभाले हुए झुके कंधो से रक्तहीन मटमैली हथेलियों और टेढ़े–मेढ़े कटे हुए नाखूनों युक्त हाथों वाली पतली बाँहे ऐसी झूलती थीं, जैसे ड्रामा में विष्णु बनने वाले की दो नकली भुजाएँ। निरंतर दौड़ते रहने के कारण उस लचीले शरीर में दुबले पैर ही विशेष पुष्ट जान पड़ते थे। बस ऐसा ही था वह, न नाम में कवित्व की गुंजाइश, न शरीर में।

पर उसकी सचेत आँखों में न जाने कौन सी जिज्ञासा भरी थी। वे निरंतर घड़ी की तरह खुली मेरे मुख पर टिकी ही रहती थीं। मानो मेरी सारी विद्या बुद्धि को सीख लेना ही उनका ध्येय था।

लड़के उससे कुछ खिंचे–खिंचे से रहते थे। इसलिए नहीं कि वह कोरी था वरन् इसलिए कि किसी की माँ, किसी की नानी, किसी की बुआ आदि ने घीसा से दूर रहने की नितांत आवश्यकता उन्हें कान पकड़–पकड़ कर समझा दी थी। यह भी उन्होंने बताया और बताया घीसा के सबसे अधिक कुरूप नाम का रहस्य। बाप तो जन्म से पहले ही नहीं रहा घर में कोई देखने भालने वाला न होने के कारण माँ उसे बँदरिया के बच्चे के समान चिपकाए फिरती थी। उसे एक ओर लिटाकर जब वह मजदूरी के काम में लग जाती थी, तब पेट के बल घिसट–घिसटकर बालक संसार के प्रथम अनुभव के साथ–साथ इस नाम की योग्यता को भी सार्थक करता जाता था।

फिर धीरे–धीरे अन्य स्त्रियाँ भी मुझे आते–जाते रोककर अनेक प्रकार की भाव भंगिमा के साथ एक विचित्र सांकेतिक भाषा में घीसा की जन्मजात अयोग्यता का परिचय देने लगीं। क्रमशः मैंने उसके नाम के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं जाना।

उसका बाप बड़ा ही अभिमानी था और भला आदमी बनने का इच्छुक। डलिया आदि बुनने का काम छोड़कर वह थोड़ी बढ़ईगिरी सीख आया और केवल इतना ही नहीं, एक दिन चुपचाप दूसरे गाँव से युवती वधू लाकर उसने अपने गाँव की सब सजातीय सुंदरी बालिकाओं को उपेक्षित और उनके योग्य माता–पिता को निराश कर डाला। मनुष्य इतना अन्याय सह सकता है; परन्तु ऐसे अवसर पर भगवान् की असहिष्णुता प्रसिद्ध ही है। इसी से जब गाँव के चौखट किवाड़ बनाकर और ठाकुरों के घरों में सफेदी करके उसने कुछ ठाट–बाट से रहना आरंभ किया, तब अचानक हैजे के बहाने वह वहाँ बुला लिया गया, जहाँ न जाने का बहाना न उसकी बुद्धि सोच सकी, न अभिमान। पर स्त्री भी कम गर्वीली न निकली। बिना स्वर–ताल के आँसू गिराकर, बाल खोलकर, चूड़ियाँ फोड़कर और बिना किनारे की धोती पहनकर जब उसने बड़े घर की विधवा का स्वाँग भरना आरंभ किया, तब तो सारा समाज क्षोभ के समुद्र में डूबने उतराने लगा उस पर घीसा बाप के मरने के बाद हुआ है। हुआ तो वास्तव में छः महीने बाद, परन्तु उस समय के संबंध में क्या कहा जाए, जिसका कभी एक क्षण वर्ष बीतता है और कभी एक वर्ष क्षण हो जाता है। इसी से यदि वह छः मास का समय रबर की तरह खिंचकर एक साल की अवधि तक पहुँच गया, तो इसमें गाँव वालों का क्या दोष ?

यह कथा अनेक क्षेपकोमय विस्तार के साथ सुनाई तो गई थी मेरा मन फेरने के लिए और मन फिरा भी; परन्तु किसी सनातन नियम से कथावाचक की ओर न फिरकर कथा के नायकों की ओर फिर गया और इस प्रकार घीसा मेरे और अधिक निकट आ गया। वह अपना जीवन संबंधी अपवाद कदाचित् पूरा नहीं समझ पाया था; परंतु

अधूरे का भी प्रभाव उस पर कम न था, क्योंकि वह सब को अपनी छाया से इस प्रकार बचाता रहता था मानो उसे कोई छूत की बीमारी हो।

पढ़ने, उसे सबसे पहले समझने, उसे व्यवहार के समय स्मरण रखने, पुस्तक में एक भी धब्बा न लगाने, स्लेट को चमचमाती रखने और अपने छोटे से छोटे काम का उत्तरदायित्व बड़ी गंभीरता से निभाने में उसके समान कोई चतुर न था। इसी से कभी–कभी मन चाहता था कि उसकी माँ से उसे माँग ले जाऊँ और अपने पास रखकर उसके विकास की उचित व्यवस्था कर दूँ – परन्तु उस उपेक्षिता, पर मानिनी विधवा का वही एक सहारा था। वह अपने पति का स्थान छोड़ने पर प्रस्तुत न होगी, वह भी मेरा मन जानता था और उस बालक के बिना उसका जीवन कितना दुर्वह हो सकता है, यह भी मुझसे छिपा न था। फिर नौ साल के कर्तव्यपरायण घीसा की गुरुभक्ति देखकर उसकी मातृभक्ति के संबंध में कुछ संदेह करने का स्थान ही नहीं रह जाना था और इस तरह घीसा वहीं और उन्हीं कठोर परिस्थितियों में रहा, जहाँ क्रूरतम नियति ने केवल अपने मनोविनोद के लिए उसे रख दिया था।

शनिश्चर के दिन वह अपने छोटे दुर्बल हाथों से पीपल की छाया को गोबर–मिट्टी से पीला चिकनापन दे आता था। फिर इतवार को माँ के मजदूरी पर जाते ही एक मैले, फटे कपड़े में बँधी मोटी–रोटी और कुछ नमक या थोड़ा चबेना और डली गुड़ बगल में दबाकर पीपल की छाया को एक बार फिर झाड़ने बुहारने के पश्चात् वह गंगा के तट पर आ बैठता और अपनी पीली सतेज आँखों पर क्षीण साँवले हाथ की छाया कर दूर–दूर तक दृष्टि को दौड़ाता रहता जैसे ही उसे मेरी नीली सफेद नाव की झलक दिखाई पड़ती वैसे ही वह अपनी पतली टाँगों पर तीर के समान उड़ता और बिना नाम लिए हुए भी साथियों को सुनाने के लिए गुरु साहब कहता हुआ फिर पेड़ के नीचे पहुँच जाता था न जाने कितनी बार दुहराए–तिहराए हुए कार्यक्रम की एक अंतिम आवृत्ति आवश्यक हो उठती। पेड़ की नीची डाल पर रखी हुई मेरी शीतलपाटी उतार कर बार–बार झाड़–पोंछकर बिछाई जाती, कभी काम न आने वाली सूखी स्याही से काली कच्चे काँच की दवात, टूटे निब और उखड़े हुए रंग वाले भूरे, हरे कलम के साथ पेड़ के कोटर से निकालकर यथास्थान रख दी जाती और तब इस विचित्र पाठशाला का विचित्र मंत्री और निराला विद्यार्थी कुछ आगे बढ़कर मेरे सप्रणाम स्वागत के लिए प्रस्तुत हो जाता।

महीने में चार दिन ही मैं वहाँ पहुँच सकती थी और कभी–कभी काम की अधिकता से एक आधे छुट्टी का दिन और भी निकल जाता था; पर उस थोड़े से समय और इने–गिने दिनों में भी मुझे उस बालक के हृदय का जैसा परिचय मिला, वह चित्र के एल्बम के समान निरंतर नवीन सा लगता है।

मुझे आज भी वह दिन नहीं भूलता जब मैंने बिना कपड़ों का प्रबंध किए हुए ही उन बेचारों को सफाई का महत्व समझाते–समझाते थका डालने की मूर्खता की। दूसरे इतवार को सब जैसे–के–तैसे ही सामने थे– केवल कुछ गंगाजी में मुँह इस तरह धो आए थे कि मैल अनेक रेखाओं में विभक्त हो गया था, कुछ के हाथ पाँव ऐसे घिसे थे कि शेष मलिन शरीर के साथ वे अलग जोड़े हुए से लगते थे और कुछ 'न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी' की कहावत चरितार्थ करने के लिए कीट मैले फटे कुरते घर ही छोड़कर ऐसे अस्थिपंजरमय रुप में आ उपस्थित हुए थे, जिसमें उनके प्राण,'रहने का आश्चर्य है, पर घीसा गायब था। पूछने पर लड़के काना–फूसी करने का या एक साथ सभी उसकी अनुपस्थिति का कारण सुनाने को आतुर होने लगे। एक–एक शब्द जोड़–तोड़कर समझना पड़ा कि घीसा माँ से कपड़ा धोने के साबुन के लिए तभी से कह रहा था– माँ को मजदूरी के पैसे मिले नहीं और दुकानदार ने अनाज लेकर साबुन दिया नहीं। कल रात को माँ को पैसे मिले और आज सवेरे वह सब काम छोड़कर पहले साबुन लेने गई। अभी लौटी है, अतः घीसा कपड़े धो रहा है, क्योंकि गुरु साहब ने कहा था कि नहा–धोकर

साफ कपड़े पहनकर आना। और अभागे के पास कपड़े ही क्या थे किसी दयावती का दिया हुआ एक पुराना कुरता जिसकी एक आस्तीन आधी थी और एक अँगोछा जैसा फटा टुकड़ा। जब घीसा नहाकर गीला अँगोछा लपेटे और आधा भीगा कुरता पहने अपराधी के समान मेरे सामने आ खड़ा हुआ तब आँखें ही नहीं मेरा रोम–रोम गीला हो गया। उस समय समझ में आए कि द्रोणाचार्य ने अपने भील शिष्य से अँगूठा कैसे कटवा लिया था। एक दिन न जाने क्या सोच कर मैं उन विद्यार्थियों के लिए 5–6 सेर जलेबियाँ ले गई; पर कुछ तोलने वाले की सफाई से, कुछ तुलवाने वाले की समझदारी से और कुछ वहाँ की छीना–झपटी के कारण प्रत्येक को पाँच से अधिक न मिल सकीं। एक कहता था– मुझे एक कम मिली; दूसरे ने बताया मेरी अमुक ने छीन ली। तीसरे को घर में सोते हुए छोटे भाई के लिए चाहिए, चौथे को किसी और की याद आ गई। पर इस कोलाहल में अपने हिस्से की जलेबियाँ लेकर घीसा कहाँ खिसक गया, यह कोई नहीं जान सका। एक नटखट अपने साथी से कह रहा था '' सार एक ठो पिलवा पाले हैं, ओही का देय बरे गा होई'' पर मेरी दृष्टि से संकुचित होकर चुप रह गया और तब तक घीसा लौटा ही। उसका सब हिसाब ठीक था– जलखई वाले छन्ने में दो जलेबियाँ लपेटकर वह माई के लिए छप्पर में खोंस आया है, एक उसने अपने पाले हुए, बिना माँ के कुत्ते के पिल्ले को खिला दी और दो स्वयं खा लीं। 'और चाहिए' पूछने पर उसकी संकोच भरी आँखें झुक गईं–ओठ कुछ हिले। पता चला कि पिल्ले को उससे कम मिली है। दें तो गुरु साहब पिल्ले को ही एक और दे दें।

और होली के पहले की एक घटना तो मेरी स्मृति में ऐसे गहरे रंगों से अंकित है जिसका भूल सकना सहज नहीं। उन दिनों हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य धीरे–धीरे बढ़ रहा था और किसी दिन उसके चरम सीमा तक पहुँच जाने की पूर्ण संभावना थी। घीसा दो सप्ताह से ज्वर से पड़ा था– दवा मैं भिजवा देती थी; परन्तु देख–भाल का कोई ठीक प्रबंध न हो पाता था। दो–चार दिन उसकी माँ स्वयं बैठी रही। फिर एक अंधी बुढ़िया को बैठा कर काम पर जाने लगी।

इतवार की साँझ को मैं बच्चों को विदा दे, घीसा को देखने चली; परन्तु पीपल के पचास पग दूर पहुँचते–पहुँचते उसी को डगमगाते पैरों से गिरते–पड़ते अपनी ओर आते देख मेरा मन उद्विग्न हो उठा। वह तो इधर पन्द्रह दिन से उठा ही नहीं था; अतः मुझे उसके सन्निपातग्रस्त होने का ही संदेह हुआ। उसके सूखे शरीर में विद्युत सी दौड़ रही थी, आँखें और भी सतेज और मुख ऐसा था, जैसे हल्की आँच में धीरे–धीरे लाल होने वाला लोहे का टुकड़ा।

पर उसके वात–ग्रस्त होने से भी अधिक चिंताजनक उसकी समझदारी की कहानी निकली। वह प्यास से जाग गया था; पर पानी पास मिला नहीं और मनिया की अंधी आजी से माँगना ठीक न समझकर वह चुपचाप कष्ट सहने लगा। इतने में मुल्लू के कक्का ने पास से लौटकर दरवाजे से ही अंधी को बताया कि शहर में दंगा हो रहा है और तब उसे गुरु साहब का ध्यान आया। मुल्लू के कक्का के हटते ही वह ऐसे हौले–हौले उठा कि बुढ़िया को पता ही न चला और कभी दीवार, कभी पेड़ का सहारा लेता–लेता इस ओर भागा। अब वह गुरु साहब के गोड़ धर कर यहीं पड़ा रहेगा; पर पार किसी तरह भी न जाने देगा।

तब मेरी समस्या और भी जटिल हो गई। पार तो मुझे पहुँचाना था ही; पर साथ ही बीमार घीसा को ऐसे समझा कर, जिससे उसकी स्थिति और गंभीर न हो जाए। पर सदा के संकोची, नम्र, और आज्ञाकारी घीसा का इस दृढ़ और हठी बालक में पता ही न चलता था। उसने पारसाल ऐसे ही अवसर पर हताहत दो मल्लाह देखे थे और कदाचित् इस समय उसका रोग से विकृत मस्तिष्क उन चित्रों में गहरा रंग भरकर मेरी उलझन को और

उलझा रहा था। पर उसे समझाने का प्रयत्न करते–करते अचानक ही मैने एक ऐसा तार छू दिया, जिसका स्वर मेरे लिए भी नया था। यह सुनते ही कि मेरे पास रेल में बैठकर दूर–दूर से आए हुए बहुत से विद्यार्थी हैं जो अपनी माँ के पास साल भर में एक बार ही पहुँच पाते हैं और जो मेरे न जाने से अकेले घबरा जाएँगे, घीसा का सारा हठ, सारा विरोध ऐसे बह गया जैसे वह कभी था ही नहीं। और तब घीसा के सामने समान तर्क की क्षमता किसमें थी। जो साँझ को अपनी माई के पास नहीं जा सकते, उनके पास गुरु साहब को जाना ही चाहिए। घीसा रोकेगा, तो उसके भगवान् जी गुस्सा हो जाएँगे, क्योंकि वे ही तो घीसा को अकेला बेकार घूमता देखकर गुरु साहब को भेज देते हैं आदि–आदि, उसके तर्कों का स्मरण कर आज भी मन भर आता है। परन्तु उस दिन मुझे आपत्ति से बचाने के लिए अपने बुखार से जलते हुए अशक्त शरीर को घसीट लाने वाले घीसा को जब उसकी टूटी खटिया पर लिटाकर मैं लौटी, तब मेरे मन में कौतुहल की मात्रा ही अधिक थी।

इसके उपरांत घीसा अच्छा हो गया और धूल और सूखी पत्तियों को बाँधकर उन्मत्त के समान घूमने वाली गर्मी की हवा से उसका रोज संग्राम छिड़ने लगा–झाड़ते–झाड़ते ही वह पाठशाला धूल–धूसरित होकर भूरे, पीले और कुछ हरे पत्तों की चार में छिप कर तथा कंकालशेषी शाखाओं में उलझते, सूखे पत्तों को पुकारते वायु की संतप्त सरसर से मुखरित होकर उस भ्रांत बालक को चिढ़ाने लगती। तब मैंने तीसरे पहर से संध्या समय तक वहाँ रहने का निश्चय किया; परन्तु पता चला, घीसा किसकिसाती आँखों को मलता और पुस्तक से बार–बार धूल झाड़ता हुआ दिन भर वहीं पेड़ के नीचे बैठा रहता है मानो वह किसी प्राचीन युग का तपोव्रती अनागरिक ब्रह्मचारी हो, जिसकी तपस्या भंग के लिए ही लू के झोंके आते हैं।

इस प्रकार चलते–चलते समय ने जब दाई छूने के लिए दौड़ते हुए बालक के समान झपटकर उस दिन पर उँगली धर दी, जब मुझे उन लोगों को छोड़ देना था, तब तो मेरा मन बहुत ही अस्थिर हो उठा। कुछ बालक उदास थे और कुछ खेलने की छुट्टी से प्रसन्न ! कुछ जानना चाहते थे कि छुट्टियों के दिन चूने की टिपकियाँ रखकर गिने जाएँ, या कोयले की लकीरें खींचकर। कुछ के सामने बरसात में चूते हुए घर में आठ पृष्ठ की पुस्तक बचा रखने का प्रश्न था और कुछ कागजों पर चूहे के आक्रमण की ही समस्या का समाधान चाहते थे। ऐसे महत्वपूर्ण कोलाहल में घीसा न जाने कैसे अपना रहना अनावश्यक समझ लेता था, अतः सदा के समान आज भी मैं उसे न ,खोज पाई। जब मैं कुछ चिंतित–सी वहाँ से चली, तब मन भारी–भारी हो रहा था, आँखों में कोहरा सा घिर–घिर आता था। वास्तव में उन दिनों डाक्टरों को मेरे पेट में फोड़ा होने का संदेह हो रहा था– ऑपरेशन की संभावना थी। कब लौटूँगी या नहीं लौटूँगी, यही सोचते–सोचते मैंने फिर कर चारों ओर जो आर्द्र दृष्टि डाली वह कुछ समय तक उन परिचित स्थानों से भेंट कर वहीं उलझ रही।

पृथ्वी के उच्छ्वास के समान उठते हुए धुँधलेपन में वे कच्चे घर आकंठ मग्न हो गए थे – केवल फूस के मटमैले और खपरैले के कत्थई और काले छप्पर वर्षा में बढ़ी गंगा के मिट्टी जैसे जल में पुरानी नावों के समान जान पड़ते थे। कछार की बालू में दूर तक फैले तरबूज और खरबूज के खेत अपने सिरकी और फूस के टट्टियों, और रखवाली के लिए बनी पर्णकुटियों के कारण जल में बसे किसी आदिम द्वीप का स्मरण दिलाते थे। उनमें एक–दो दिए जल चुके थे, तब मैंने दूर पर एक छोटा–सा काला धब्बा आगे बढ़ता देखा। वह घीसा ही होगा। यह मैंने दूर से ही जान लिया। आज गुरु साहब को उसे बिदा देना है, यह उसका नन्हा हृदय अपनी पूरी संवेदना शक्ति से जान रहा था, इसमें संदेह नहीं था। परन्तु उस उपेक्षित बालक के मन में मेरे लिए कितनी सरल ममता और मेरे विछोह की कितनी गहरी व्यथा हो सकती है, यह जानना मेरे लिए शेष था।

निकट आने पर देखा कि उस धूमिल गोधूली में बादामी कागज पर काले चित्र के समान लगने वाला नंगे बदन घीसा एक बड़ा तरबूज दोनों हाथों में सम्हाले था, जिसमें बीच के कटे भाग में से भीतर की ईषत–लक्ष्य ललाई चारों ओर के गहरे हरेपन में कुछ खिले कुछ बंद गुलाबी फूल–जैसी जान पड़ती थी।

घीसा के पास न पैसा था न खेत– तब क्या वह इसे चुरा लाया है! मन का संदेह बाहर आया ही और तब मैंने जाना कि जीवन का खरा सोना छिपाने के लिए उस मलिन शरीर को बनाने वाला ईश्वर उस बूढ़े आदमी से भिन्न नहीं, जो अपनी सोने की मोहर को कच्ची मिट्टी की दीवार में रखकर निश्चिंत हो जाता है। घीसा गुरु साहब से झूठ बोलना भगवान जी से झूठ बोलना समझता है। वह तरबूज कई दिन पहले देख आया था। माई के लौटने में जाने क्यों देर हो गई, तब उसे अकेले ही खेत पर जाना पड़ा। वहाँ खेतवाले का लड़का था, जिसकी उसके नए कुरते पर बहुत दिन से नजर थी। प्रायः सुना–सुना कर कहता रहता था कि जिनकी भूख जूठी पत्तल से बुझ सकती है, उनके लिए परोसा लगाने वाले पागल होते हैं। उसने कहा– पैसा नहीं है, तो कुरता दे जाओ। और घीसा आज तरबूज न लेता, तो कल उसका क्या करता। इससे कुरता दे आया; पर गुरु साहब को चिंता करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि गर्मी में वह कुरता पहनता ही नहीं और जाने–आने के लिए पुराना ठीक रहेगा। तरबूज सफेद न हो, इसलिए कटवाना पड़ा– मीठा है या नहीं यह देखने के लिए उँगली से कुछ निकाल भी लेना पड़ा।

गुरु साहब न लें, तो घीसा रात भर रोएगा– छुट्टी भर रोएगा। ले जाएँ तो वह रोज नहा–धोकर पेड़ के नीचे पढ़ा हुआ पाठ दोहराता रहेगा और छुट्टी के बाद पूरी किताब पट्टी पर लिखकर दिखा सकेगा।

और तब अपने स्नेह में प्रगल्भ उस बालक के सिर पर हाथ रखकर मैं भावातिरेक से ही निश्चल हो रही। उस तट पर किसी गुरु को किसी शिष्य से कभी ऐसी दक्षिणा मिली होगी, ऐसा मुझे विश्वास नहीं; परन्तु उस दक्षिणा के सामने संसार के अब तक सारे आदान–प्रदान फीके जान पड़े।

फिर घीसा के सुख का विशेष प्रबंध कर मैं बाहर चली गई और लौटते–लौटते कई महीने लग गए। इस बीच में उसका कोई समाचार न मिलना ही संभव था। जब फिर उस ओर जाने का मुझे अवकाश मिल सका, तब घीसा को उसके भगवानजी ने सदा के लिए पढ़ने से अवकाश दे दिया था– आज वह कहानी दोहराने की मुझ में शक्ति नहीं है; पर संभव है आज के कल, कल के कुछ दिन, दिनों के मास और मास के वर्ष बन जाने पर मैं दार्शनिक के समान धीर–भाव से उस छोटे जीवन का उपेक्षित अंत बता सकूँगी। अभी मेरे लिए इतना ही पर्याप्त हैं कि मैं अन्य मलिन मुखों में उसकी छाया ढूँढती रहूँ।

शब्दार्थ

क्षत–विक्षत – कटा–फटा; **अद्वैत** – एकाधिक ना होना; **असहिष्णुता** – सहनशीलता का अभाव; **क्षेपक** – मूलबात में अपनी बात जोड़ते हुए कहना, **नियति** विधान या होनी; **शीतलपाटी** – एक प्रकार के घास से बनी चटाई; **जैसे के तैसे** – यथावत; **सन्निपातग्रस्त** – लकवाग्रस्त; **प्रगल्भ** – वाचाल; **भावातिरेक** – भावनाओं की अधिकता; **दुर्वह** – कठिन; **हताहत** – घायल; **ईषत लक्ष्य** – अभीष्ट अथवा लक्ष्य। **इंडुरी** = गुडरी (घड़े को स्थिर रखने के लिए सिर पर गोल रखा गया कपड़ा)

अभ्यास

पाठ से

1. पहली बार जब घीसा कक्षा में आया तब वह कैसा दिखाई पड़ता था? अपने शब्दों में वर्णन कीजिए।
2. घीसा का नाम घीसा कैसे पड़ा?
3. घीसा कक्षा लगने के पूर्व क्या तैयारी करता था?
4. बच्चे साफ–सफाई का पाठ पढ़ने के बाद अगली कक्षा में किस–प्रकार तैयार होकर आए थे?
5. घीसा को देखकर ''आँखें ही नहीं मेरा रोम–रोम गीला हो गया'' लेखिका ने ऐसा क्यों कहा?
6. लेखिका ने ईश्वर की तुलना बूढ़े आदमी से क्यों की है?
7. महादेवी वर्मा अक्सर अपनी छुट्टियाँ कैसे बिताया करती थीं?
8. भक्तिन कौन थी? महादेवी वर्मा को ऐसा क्यों लगता था कि वो (भक्तिन) अपने आपको उनकी अभिभाविका मानने लगी थी?
9. घीसा ने अंत में गुरु साहिबा को क्या भेंट दी? यह भेंट सामग्री उसने कैसे जुटाई?
10. महादेवी वर्मा को अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा घीसा ही क्यों याद रहा?

पाठ से आगे

1. ''संध्या के लाल सुनहली आभा वाले उड़ते हुए दुकूल पर रात्रि ने मानो छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी।'' इस पंक्ति में प्रकृति के जिस दृश्य का वर्णन किया गया है उसे अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए।
2. ''यह कथा अनेक क्षेपकोमय विस्तार के साथ सुनाई तो गई थी मेरा मन फेरने के लिए, और मन फिरा भी; परन्तु किसी सनातन नियम से कथावाचक की ओर न फिरकर कथा के नायकों की ओर फिर गया और इस प्रकार घीसा मेरे और अधिक निकट आ गया।'' उपरोक्त पंक्तियों में लोगों की किस मनोवृत्ति व लेखिका के किस व्यक्तित्व की ओर संकेत किया गया है?
3. अन्य बच्चों की माँ, बुआएँ तथा दादी–नानी उन्हें घीसा से दूर रहने की हिदायत क्यों देती थी? आज के संदर्भ में क्या ऐसा व्यवहार करना उचित है ? अपने विचार लिखिए।
4. गर्मी की छुट्टियाँ लगने पर प्रायः सबके मन में खुशी और दुःख के मिले–जुले भाव होते हैं, छुट्टियाँ होने पर आप एवं आपके साथी कैसा महसूस करते हैं? आपस में बातचीत करके लिखें।
5. निम्नांकित पंक्तियों में निहित भाव को स्पष्ट करें–

ES28H1

(क) ''तब मैंने जाना कि जीवन का खरा सोना छिपाने के लिए उस मलिन शरीर को बनाने वाला ईश्वर उस बूढ़े आदमी से भिन्न नहीं, जो अपने सोने की मोहर को कच्ची मिट्टी की दीवार में रखकर निश्चिंत हो जाता है।''

(ख) ''जिनकी भूख जूठी पत्तल से बुझ सकती है, उनके लिए परोसा लगाने वाले पागल होते हैं।''

6. पाठ के आरंभ में पानी भरती महिलाओं का चित्रण और घीसा की देहयष्टि का इस प्रकार वर्णन किया गया है कि हमारे मन मस्तिष्क में तस्वीर साकार हो जाती है। लेखन शैली में इस विधा को रेखाचित्र के नाम से जाना जाता है।

   आप भी अपने सूक्ष्म अवलोकन के आधार पर किसी व्यक्ति, वस्तु अथवा दृश्य का चित्रण एक अनुच्छेद में कीजिए।

भाषा के बारे में

ESB4NN

1. हमारे शरीर के विविध अंगों के नाम का प्रयोग, कुछ का स्त्रीलिंग में तो कुछ का पुल्लिंग में होता है यथा सिर, गला, हाथ आदि पुल्लिंग होते हैं तो आँखें, नाक, मूँछ स्त्रीलिंग में होती हैं। शरीर के सभी अंगों का निम्नांकित सारणी के अनुसार शिक्षक की मदद से वाक्यों में प्रयोग करते हुए उनके लिंगों का निर्धारण कीजिए इसमें आप अपने सहपाठियों या शिक्षक की भी मदद ले सकते हैं।

अंगों का नाम	लिंग	वाक्य

2. महादेवी जी ने घीसा नामक इस रेखाचित्र के वर्णन में विशेषण–विशेष्यों का बहुतायत से प्रयोग किया है। कक्षा में समूह में बँटकर पाठ के अलग–अलग हिस्सों/अनुच्छेदों में आए विशेषण एवं विशेष्यों की सूची तैयार कीजिए। उन विशेषणों को अन्य उपयुक्त विशेष्यों के साथ भी जोड़ने का प्रयास कीजिए।

3. वाक्य संरचना करते समय यदि वाक्य में कर्त्ता के साथ 'ने' विभक्ति हो परन्तु कर्म के साथ 'को' विभक्ति न हो तो क्रिया, कर्म के अनुसार होगी। यथा– मैंने पुस्तक पढ़ी। मोहन ने रोटी खाई। सीता ने बताशा खाया। मीरा ने फल खाए।

   इस पाठ में भी ऐसे प्रयोग कई स्थल पर देखे जा सकते हैं, जैसे– दुकानदार ने अनाज लेकर साबुन दिया नहीं। सदा के समान आज भी मैं उसे न खोज पाया। रात्रि ने मानो छिपकर अंजन की मूठ चला दी थी। मैंने फिरकर चारों ओर जो आर्द्र दृष्टि डाली। आप भी इस प्रकार के कुछ और वाक्यों का निर्माण कीजिए।

योग्यता विस्तार

1. गुरु दक्षिणा की परंपरा आज प्रचलन में नहीं है किन्तु इससे संबंधित बहुत सारी कहानियाँ प्रचलित हैं जैसे एकलव्य की कथा, आरुणि की कथा आदि। अपने बड़ों से उन्हें सुनिए और लिखिए।

2. ''घीसा'' की ही तरह महादेवी जी द्वारा लिखित अन्य रेखाचित्र यथा भक्तिन, सोना, गिल्लू रामा आदि को भी पुस्तकालय से लेकर पढ़िए।

ESJZQB